आर्थिक समस्याएँ और समाधान

समाज में शान्ति बनी रहने में समाज के प्रत्येक व्यक्ति के भौतिक सुख का भी महत्वपूर्ण योगदान होता है। भौतिक सुख का आकलन होता है आर्थिक स्थिति से और आर्थिक स्थिति का मूल्यांकन होता है अर्थ से अतः समाज में सुख और शान्ति बने रहने में अर्थव्यवस्था का ठीक होना बहुत महत्वपूर्ण होता है।

भारत में वतमान समय में छः आर्थिक समस्याएँ दिखती हैं।

1. महंगाई **2.** मुद्रा स्फीति **3**. गरीबी **4.** शिक्षित बेरोजगारी **5.** आर्थिक असमानता **6.** श्रमिक बेरोजगारी । इनमें से प्रथम चार भावनात्मक और अस्तित्वहीन समस्याए हैं जो सिर्फ भ्रम मात्र हैं और शेष दो, आर्थिक असमानता और श्रमिक बेरोजगारी वास्तविक समस्याए है जिनका समाज की शान्ति व्यवस्था पर व्यापक प्रभाव पड़ता है।

स्वाभाविक ही है कि अस्तित्वहीन समस्याओं को समाज में जीवित रखना कुछ लोगों के संगठित प्रयत्नों का ही परिणाम है। ऐसी भावनात्मक समस्याआ में पहला स्थान है महंगाई का। आज तक महंगाई की कोई स्पष्ट परिभाषा बनी ही नहीं। परिभाषा के अभाव में महंगाई शब्द का व्यापक दुरूपयोग हुआ। अनुसधान से यह प्रमाणित हुआ है कि स्वतंत्रता के बाद के वर्षो में भारत में **1.** सोना, चांदी, जमीन, और सरकारी कर्मचारियां का वेतन बहुत महंगा हुआ है, **2.** पेट्रोल, दालें, श्रम, खाद्य तेल आदि कुछ मंहगे या स्थिर हैं तथा **3**. अनाज, मिट्टीतेल, डीजल, कपड़ा, बिजली, सहित हजारों लाखों सामान या ता सस्ते हुए हैं या बहुत सस्त हुए हैं। सामान्य सिद्धान्त है कि किसी वस्तु की जिस आधार वस्तु से तुलना की जाती है उस आधार वस्तु को स्थिर होना चाहिये। प्राचीन समय में ऐसी आधार वस्तु के रूप में सोना को रखा गया था जिसे बाद में बदलकर चॉदी और उसके बाद अस्थिर आधारों वाला रूपया बना दिया गया। सच्चाई यह है कि रूपये का लगातार अवमूल्यन हुआ है जिसे महंगाई के रूप में प्रचारित किया गया। सन् सैंतालिस में यदि एक रूपये का आधा सेर घी मिलता था तो आज भी उससे कुछ अधिक ही मिलेगा यदि आप सन् सैतालिस वाला ही रूपया देव। सन् सैंतालिस में हमारे क्षेत्र में एक मजदूर को दिन भर में लगभग दो किलो अनाज या उसके बराबर पैसा मिलता था जो आज बढ़ कर छः से आठ किलो अनाज के बराबर मिलता है । इस तरह या तो अनाज सस्ता हुआ या श्रम महंगा हुआ। कुछ न कुछ तो ऐसा अवश्य हुआ जो वर्तमान महगाई के प्रचार से भिन्न है। यदि किसी वस्तु के महंगी या सस्ती होने का वास्तविक आकलन करना हो तो उस वस्तु के आज के मूल्य में सन् सैंतालिस से आज तक की मुद्रा स्फीति का भाग देकर ही वास्तविकता को समझा जा सकता है। इस तरह भारत में न तो महंगाई बढ़ी है न ही आम जन जीवन पर उसका कोई पभाव पड़ा है। महंगाई का हल्ला राजनेताओं ने सत्ता संघर्ष में उपयोग के लिए, सरकारी कर्मचारियों ने अपना वेतन बढ़वाने के लिए तथा पूँजीपतियों ने आर्थिक असमानता जैसे वास्तविक मुद्दे पर से ध्यान हटाने के लिए किया है और वह हल्ला इतना योजना बद्ध, इतना व्यापक हुआ कि पूरा भारत इस अस्तित्वहीन समस्या से पीड़ित दिखने लगा। सबसे आश्चर्य तो यह है कि भारत की वर्तमान व्यवस्था महंगाई दूर करने के लिए निरंतर प्रयत्नशील है जबकि सच्चाई यह है कि यह समस्या ही स्वयं मे अस्तित्वहीन है।

इसी तरह की एक समस्या है मुद्रा स्फीति। भारत में लगातार यह बात फैलाई जाती है कि मुद्रा स्फीति का सामान्य जन जीवन पर व्यापक प्रभाव पड़ता है जबकि यह धारणा पूरी तरह गलत है। मुद्रा स्फीति का अर्थ होता है रूपये का मूल्य ह्रास जिसका भावार्थ होता है नगद रूपये पर अघोषित कर। मुद्रा स्फीति का दुष्प्रभाव सिर्फ नगद रूपये पर ही पड़ता है अन्य किसी वस्तु पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। मुद्रा स्फीति का कोई प्रभाव जमीन, मकान, अनाज, कपड़ा आदि सामान, श्रम या बुद्धि के मूल्य पर शून्यवत् होता है। फिर सामान्य जन जीवन पर इसका क्या और क्यों प्रभाव होगा? जिसक पास घर में या कहीं और रखा हुआ नगद रूपया होगा उस पर यदि दुष्प्रभाव पड़े तो धनहीनो को क्यों चिन्तित होना चाहिये? मान लीजिये कि हमने एक आदेश द्वारा कल से सौ रूपये की मुद्रा को एक नया रूपया और एक रूपया को एक नया पैसा लिखना और मानना शुरू कर दिया तो महंगाई तो तत्काल समाप्त हो गई। परंतु सामान्य जन जीवन पर इसका क्या अच्छा या बुरा प्रभाव पड़ा? मेरे विचार में कुछ नहीं। अतः मेरे विचार में महंगाई एक अस्तित्वहीन समस्या है ओर मुद्रा स्फीति प्रभावहीन समस्या।

भारत में तीसरी सवाधिक प्रचार वाली समस्या है गरीबो। भारत के निन्यान्नवे प्रतिशत लोग आज तक गरीबी की परिभाषा नहीं जानते। गरीबी पर लेख लिखने वाले विद्वान और अर्थशास्त्री तक नहीं बता पाते की गरीबी की परिभाषा क्या है। फिर भी यदि हम शासकीय मापदण्डों को भी स्वीकार कर लें तो भारत में गरीबी रेखा के नीच जीवन यापन करने वालों की संख्या में बहुत कमी आइ है आर यदि हम वास्तविकता पर ध्यान दें तो भारत के रहने वाले आम आदमी का जीवन स्तर उंचा हुआ है। गरोबी काई स्वतंत्र शब्द न होकर एक सापेक्ष शब्द है जिसक अनुसार यदि किसी व्यक्ति की तुलना बहुत बड़े आदमी से की जाय तो वह गरीब दिखता है और अत्यंत गरीब से तुलना करे तो वही धनवान दिखने लगता है। गरीबी घटी या बड़ी इसका ठीक से आकलन तभी सम्भव है जब गरीबी की रेखा बिल्कुल स्पष्ट और सबके समझ में आने वाली हो अन्यथा गरीबी एक भ्रामक शब्द जाल में फंसी रहेगी। गरीबी बिल्कुल स्पष्ट होते हुए भी शासकीय रेकार्ड और नेताओं के पास बहुत बड़ी समस्या है क्योंकि गरीबी उनके जीवन का बहुत बड़ा आधार बनी हुई है। भारत में अब तक गरीबी दूर करने में जीतना रूपया खर्च हुआ वह यदि नहीं खर्च होता तो भारत में गरीबी लगभग आज की तरह ही रहती। वर्तमान समय में सिर्फ एक वर्ष में गरीबी दूर करने पर होने वाला कुल खर्च का आकड़ा भी विस्मयकारी हो सकता है। गरीबी हटाओ शब्द नौकरशाहों, राजनेताआ तथा बिचौलियों की प्रगति का एक महत्वपूर्ण आधार बना हुआ हैं।

भारत में एक और शब्द भावनात्मक रूप से प्रचारित हुआ है और वह है शिक्षित बेरोजगारी। बेरोजगारी शब्द की परिभाषा पर व्यापक खोजबीन की गई तो वह परिभाषा इस तरह बनी ''किसी स्थापित इकाई द्वारा न्यूनतम घोषित श्रम मूल्य पर योग्यतानुसार काम का अभाव'' इस परिभाषा के अतिरिक्त जो भी परिभाषाएँ बनी हैं वे सब या तो गलत या षडयंत्र हैं। प्रश्न उठता है कि यदि एक व्यक्ति तीस रूपये में कही काम करने को मजबूर है क्योंकि उसकी स्थिति उसे तत्काल काम हेतु मजबूर कर रहीं है दूसरी ओर एक डाक्टर दो सौ रूपया में काम करने के लिए इसलिए तैयार नहीं है कि उसकी योग्यतानुसार उसे चार सौ रूपया चाहिए। तो समाज के लिए किसे बेरोजगार मानकर उसकी चिन्ता करना उचित होगा? न्यूनतम घोषित श्रम मूल्य से भी कम पर काम कर रहे मजदूर की चिन्ता पहले की जाय या योग्यतानुसार मूल्य की प्रतीक्षा में बेकार बैठे डाक्टर की चिन्ता। आय के तीन श्रोत माने जाते हैं – 1. श्रम 2. बुद्धि 3. धन। श्रम प्रत्येक व्यक्ति के पास इस तरह होता है कि उसकी आय शक्ति में बहुत अधिक अन्तर नहीं होता। बुद्धि शिक्षित लोगों के पास श्रम के अतिरिक्त आय का साधन बनती है और धन जब जुड जाता है तब तो बात ही और है। जिस व्यक्ति के पास आय क दो साधन है वह कभी बेरोजगार हो ही नही सकता। बेरोजगार ता वही हो सकता है जिसके पास श्रम के अतिरिक्त अन्य कोई उपाय नहीं। एक सामान्य सोच की बात हे कि भारत के किसी गॉव के एक हजार लोगों में से नौ सौ लोगों ने श्रम स अपना पेट पालकर किसी तरह एक सौ

लोगों को पढ़ा लिखा दिया। अब कल्पना करिये की पढ़ लिख कर वे सब शिक्षित लोग इन नौ सौ लोगों की सहायता की तो बात ही नही कर रहें उल्टे उनसे शिक्षित बेरोजगार के रूप में सहायता की अपेक्षा करते है। मेरे विचार में ऐसे लोग नौ सौ के लिए गद्दारी करते है। इन एक सो लोगा ने शिक्षित बेरोजगार शब्द की रचना ही श्रम का शोषण करने के उद्धेश्य से की है अन्यथा शिक्षित व्यक्ति अशिक्षित व्यक्ति से अधिक बरोजगारी ग्रस्त हो ही नहीं सकता। मैंने सरगुजा जिले के रोजगार कार्यालय में अंकित बरोजगारों की सूची देखी तो उसमें एक भी बेरोजगार व्यक्ति का नाम नहीं था। उसमें सिर्फ नाम उन लोगों का था जो न्यूनतम श्रम मूल्य पर काम करने के लिए तैयार नही थे और योग्यतानुसार वेतन के आधार पर अच्छे रोजगार की प्रतीक्षा में हैं। लोग कहते ह कि कही एक सौ पद के लिए मांग की जाती है तो दसो हजार लोग उस पद के लिए टूट पड़ते है। यह बेरोजगारी का उदाहरण दिया जाता है। यह उदाहरण बिल्कुल गलत भी है और षड़यंत्र भी। कहीं ऐसी भाग दौड़ नहीं है, यदि उक्त एक सौ पद का वेतन मान न्यूनतम श्रम मूल्य से कई गुना अधिक न हो। एक डम रबडी रखकर उसे खाने के लिए टूट पडने वालों के आधार पर पूरे गॉव के भूखे होने का आकलन तैयार करने वाली व्यवस्था को यदि षड़यन्त्र न कहे तो और क्या कहें। मैं बिल्कुल दृढ़ता पूर्वक कह सकता हूँ कि यदि बेरोजगारी को किसी स्थापित व्यवस्था के दायित्व के रूप में स्वीकार करने की आवश्यकता है तो उसे श्रम के साथ हो जोड़ना होगा। यदि आपने उसे शिक्षा के साथ जोड़ा तो वह श्रम के साथ धोखा माना जायेगा। अथवा दूसरे शब्दों में कहें तो श्रम का शोषण करने के उद्धेश्य से बुद्धि जीवियों द्वारा रचित षड़यंत्र भी कह सकते हैं। वर्तमान समय में बेरोजगारी पर चोट करने का तात्कालिक उपाय यह है कि सभी सरकारी कार्यो का अधिकतम वेतन न्यूनतम घोषित श्रम मूल्य तक स्थिर कर दें और जिन पदों पर इस आधार पर कोई बेरोजगार काम करने को न मिले उस पद पर ही अधिक वेतन की व्यवस्था हो। एक ही आदेश से करोड़ों लोग रोजगार भी पा जायेंगे और शासन को आर्थिक बचत भी हो जायेगी।

दो समस्याएँ भारत में वास्तविक है :– पहली है श्रमिक बेरोजगारी। अमेरिका में न्यूनतम श्रम मूल्य करीब पचास किलो अनाज है, लीबिया तथा कुछ अन्य देशों में तो सत्तर किलो अनाज तक है, हरियाणा पंजाब में श्रम मूल्य दस से बारह किलो है और हमारे सरगुजा जिले में पुरूषों का छः किलो गेहूँ आर महिलाओं का साढ़े पांच किलो। दुनियॉ में तो भारत का श्रम मूल्य कम हैं ही किन्तु भारत में भी हरियाणा और सरगुजा में इतनी विसंगति है। इस स्थिति में वर्ष में दो सौ से ढ़ाई सौ दिन ही काम मिल पाता है। । दुनियॉ में सभ्य समाज को धोखा देने के उद्धेश्य से हमारी सरकारों ने न्यूनतम श्रम मूल्य के नाम पर कृत्रिम घोषणाएँ कर रखी हैं। यह बड़े आश्चर्य की बात है कि कोई सरकार किसी वस्तु का न्यूनतम मूल्य तो घोषित कर दे किन्तु उस वस्तु को उससे कम पर बिकते हुए भी अपना दायित्व न समझे और उसे यों ही बिकने दें। किन्तु आज मानव श्रम क साथ तो यही दुर्गति हो रही है। दैनिक न्यूनतम श्रम मूल्य की घोषणा करने वाली सरकार को महसूस क्यों नहीं होता जब डेढ सौ से दो सौ रूपये में भी काम करने के लिए भी हजारों हाथ प्रतीक्षा रत खड़े हैं। श्रम मूल्य को असमानता के कारण जब छत्तीसगढ़ का श्रमिक पलायन करके अन्य प्रदेशों को जाने लगा तथा यहॉ के उद्योगपतियों के समक्ष कुछ श्रम समस्या आनी शुरू हुई तो हमारी छत्तीसगढ़ सरकार ने श्रमिकों के हितो के नाम पर तथा उन उद्योगपतियों से मिलकर श्रम पलायन पर कानूनी प्रतिबंध लगा दिये। अब छत्तीसगढ़ के श्रमिक चोर और अपराधी के समान छिपकर तथा घूस देकर हमारी सीमा से बाहर लाभदायक रोजगार के लिए जा पाते हैं। श्रम क साथ ऐसा अमानवीय खिलवाड़ आप कल्पना भी नहीं करते होंगे। किसी भी समाज में सम्पन्नता का मापदण्ड वहॉ के औसत श्रम मूल्य को ही मानना चाहिए। वह भी वास्तविक श्रम मूल्य को न कि कृत्रिम श्रम मूल्य को, जैसा कि घपला भारत में चल रहा है। किन्तु दुःख है कि दुनियॉ के देशों ने न तो प्रगति के मापदण्ड को श्रम क साथ जोड़ा नहीं उसको आवश्यकता महसूस की। कोई देश चाहे अन्य किसी भी आधार पर कितनी भी प्रगति क्यों न कर लें किन्तु यदि वह श्रम मूल्य में सुधार नहीं कर पाता तो उसकी सारी पगति अमानवीय ही कही जानी चाहिये।

लोग कहते है कि पश्चिमी देशों में श्रम का बहुत सम्मान है। लोग अपने अपन घरेलू काय नौकर की अपेक्षा स्वयं करते हैं। भारत के लोगों में ऐसे संस्कार पैदा करने चाहिए। मेरे विचार में श्रम सम्मान भावनात्मक मुद्दा कम और आर्थिक अधिक है। पश्चिमी देश श्रम अभाव के देश हैं जहॉ श्रम बहुत महंगा है। इसलिए श्रम सम्मान उनका स्वभाव बना हुआ ह। भारत श्रम बहुल देश बना हुआ है। यहॉ श्रम सस्ता भी है और आसानी से उपलब्ध भी है। इसलिए श्रम सम्मान नही है। भावनात्मक प्रचार द्वारा श्रम का एक दो प्रतिशत से अधिक सम्मान नहीं बढ़ाया जा सकता। श्रम का सम्मान बढ़ाने का सिर्फ एक ही मार्ग है कि श्रम की मांग बढ़े और भारत में श्रम अभाव हो तभी श्रम सम्मान होगा। मैं अंतिम रूप से इस निष्कर्ष पर पहुँच चुका हूँ कि भारत की अनेक समाजिक समस्याओं का कारण भी कहीं न कहीं श्रम की मांग में कमी के साथ जुड़ा हुआ है। यदि श्रम नीति पूरी तरह इस प्रकार बदल दी जावे कि श्रम की मांग बढ़े, श्रम मल्य बढ़े, और श्रम सम्मान बढ़े तो अनेक सामाजिक समस्याओं के समाधान में भी सहायता हो सकती है।

भारत में एक और आर्थिक समस्या है जो भारतीय जन मानस में गहरा घाव पैदा कर रही है और वह है आर्थिक असमानता । पिछले पचपन वर्षो में गरीबी घटी है, श्रम मूल्य बढ़ा है, क्रय शक्ति भी बढ़ी है, भौतिक विकास भी अधिक हुआ है, किन्तु इन सबके बाद भी आम लोगो में असंतोष और कटुता का भाव इसलिए बढ़ा कि विकास बहुत ही असंतुलित हुआ। धनी लोग बहुत तेजी से आगे बढ़े और गरीब लोग चीटी की चाल से बढ। पूरे भारत म आर्थिक असमानता जिस तीव्र गति से बढ़ी और बढ़ रही है उससे भारत में आपसी विद्वेष भी बहुत अधिक बढ़ा है और बढ़ रहा है। सम्पन्न लोगों को उपलब्ध सुविधाएं, उनका सम्मान और उनका दिखावटी रहन सहन सामान्य लोगों में ईर्ष्या का आधार बन रहा है। मैं मानता हूँ कि आर्थिक असमानता स्वाभाविक प्रक्रिया है और इसे ईर्ष्या के साथ जोड़कर देखना उचित नहीं है किन्तु यदि आर्थिक असमानता स्वभाविक प्रक्रिया है तो ईर्ष्या भी उसकी स्वभाविक प्रतिक्रिया ही मानी जानी चाहिये। भारत में आर्थिक असमानता भी एक बहुत बड़ी और यर्थात समस्या है तथा समाज की समस्याओं के समाधान में इसका भो महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है।

इतिहास बताता है कि जब भी कोई व्यवस्था या व्यवस्था प्रमुख समाज में न्याय और सुरक्षा दने में विफल हो जाता है अथवा उसके मन में जन हित की अपेक्षा शासक और शासित का भाव प्रबल रूप धारण कर लेता है तब वह अपनी सत्ता को स्थिर बनाये रखने के लिए दस प्रकार के नाटक करता है। प्रजातांत्रिक व्यवस्था में ये नाटक विशेष रूप से महत्वपूर्ण और आवश्यक होते हैं। उन दस नाटकों में से तीन प्रकार के नाटक अर्थ व्यवस्था से संबंध रखते हैं :– **1.** समाज के गरीब और अमीर वर्ग के बीच इस प्रकार द्वेष भावना का विस्तार देना कि वह वर्ग विद्वेष बनकर उसकी अंतिम परिणति वर्ग संघर्ष की हो । **2.** प्रशासन बिल्लियों के बीच बंदर की भूमिका में रहें अर्थात् **(क)** रोटी कभी बराबर न होने दें **(ख)**छोटी रोटी वाली बिल्लो को कभी संतुष्ट न होने दें। उसके मन में असंतोष और ईर्ष्या की ज्वाला निरंतर जलती रहे **(ग)**प्रशासन समानता में निरंतर सक्रिय दिखे। **3.**आर्थिक असमानता को प्रजातांत्रिक ढंग से निरंतर मजबूत करने के लिए गरीब लोगों पर अप्रत्यक्ष कर और प्रत्यक्ष सुविधा तथा अमीर लोगों पर प्रत्यक्ष कर और अप्रत्यक्ष सुविधा देने की नीति पर काम करें। भारत में यद्यपि ये तीनों नाटक स्वतंत्रता के कुछ वर्षो बाद ही शुरू हो गये थे किन्तु वर्तमान व्यवस्था की अर्थनीति तो पूरी तरह इन तीन नाटको पर ही निर्भर है। यह अलग बात हे कि नरसिंह राव जी के पूव की सरकारें प्रत्यक्ष रूप से समाजवाद और परोक्ष रूप से पूँजीवाद नीतियों पर लुक छिप कर काम करती थीं किन्तु नरसिंह राव जी के बाद अब तक यह लुका छिपी का खेल

बन्द होकर स्पष्ट रूप से पूँजीवादी नीतियॉ अपना ली गई हैं जिससे भा0ज0पा0 और कांग्रेस की गरीब और अमीर के बीच वर्ग संघर्ष बढ़ाने के पहले प्रकार के नाटक में कमी दिख रही है किन्तु वामपंथी सहित अन्य सभी दल पहले प्रकार के नाटक के आधार पर अब भी वर्ग संघर्ष बढ़ाने को पुर जोर कोशिश कर रहे हैं। शेष दूसरे और तीसरे प्रकार के नाटक में भाजपा, कांग्रेस, वामपंथी, क्षेत्रीय तथा अन्य सभी दल पूरी तरह एक मत भी हैं और सक्रिय भी। भारत की सम्पूर्ण अर्थ व्यवस्था पर बुद्धि जीवियों तथा पूँजोपतियों का ऐसा शिकंजा कसा हुआ है कि हर नीति प्रजातांत्रिक तरीके से श्रम शोषण और आर्थिक असमानता बढ़ाने में सहायक ही होती है। यहाँ तक कि आर्थिक असमानता और श्रम शोषण के विरूद्ध दिन रात आवाज उठाने वाले वामपंथी भी अन्ततोगत्वा अप्रत्यक्ष रूप से बुद्धिजीवियों और पूँजीपतियों के हितों के पक्ष की ही नीतियों का समर्थन करते है भले ही वे यह कार्य उन्हें गाली देकर ही क्यों न करें।

आम भारतोय जानता है कि भारत में गरीबो और अमीरो को दो वर्गो में बांटकर वर्ग विद्वेष राजनेताओं द्वारा पैदा किया हुआ है तथा वे ही इसे धीरे धीरे वर्ग संघर्ष की दिशा में ले जा रहे है। हर भारतीय यह भी देख रहा है कि स्वतंत्रता के बाद प्रशासन पूरी ताकत से आर्थिक असमानता को मिटाने का प्रयास कर रहा है किन्तु आर्थिक असमानता लगातार बढ़ी है और अब तो और भी अधिक तीव्र गति से बढ़ी है। किन्तु भारत का आम नागरिक यह बिल्कुल नहीं जानता कि बड़ी सफाई से पूरी तरह प्रजातात्रिक तरीके से तथा सबको संतुष्ट करते हुए यह काम कैसे हो रहा है। वह यह भी नहीं जानता है कि भारत में श्रम जोवियों और आर्थिक असमानता के विरूद्ध संघर्ष रत वामपंथी दलों की सम्पूर्ण नीतियॉ भी बुद्धिजीवियों और पूँजीपतियों के हित संरक्षण में पूरी तरह सक्रिय हैं। वह प्रजातांत्रिक खेल हैं :– 1. समाज का आर्थिक असमानता पर से ध्यान हटाने के लिए महंगाई और मुद्रा स्फीति को बड़ी समस्या के रूप में प्रचारित करना। 2. श्रम शोषण के उद्दश्य से शिक्षित बेरोजगारी शब्द तैयार करके उसे महत्वपूर्ण बनाना। 3. श्रम मूल्य की वास्तविक स्थिति छिपाने के लिए न्यूनतम श्रम मूल्य की ऐसी घोषणा करना जिसका वास्तविकता से कोई संबंध न हो। 4. करों का ऐसा ढ़ाचा तैयार करना कि जो वस्तु गरीब लोग अधिक मात्रा में उपयोग करते हैं और अमीर कम उन पर अधिक से अधिक कर लगाकर उन वस्तुओं का सस्ता रखा जाय जिनका बड़े लोग अधिक और छोटे लोग कम उपयोग करते हों। ऐसी कम उपयोग की वस्तुओं के प्रति छोटे लोगों में ऐसा भावनात्मक आकर्षण पैदा किया जावे कि वे उसे अपने उपयोग की वस्तु मान लें। पहली, दूसरी और तीसरी योजना पर भारत और उसकी सभी राज्य सरकारे पूरी इमानदारी तथा सक्रियता से काम कर रही हैं। वे महंगाई भी दूर कर रही हैं और मुद्रा स्फीति को भी पूरी ताकत से नियंत्रित कर रही हैं। शिक्षित बेरोजगारी दूर करने के पीछ तो सभी सरकारे दीवानगी की हद तक चली गइ हैं। कृत्रिम श्रम मूल्य भी प्रति एक या दो वर्षो में बहुत अधिक बढ़ा दिया जाता है किन्तु तीसरे प्रकार का नाटक जिसमें गरीबो पर अप्रत्यक्ष कर और प्रत्यक्ष सहायता तथा अमीरो पर प्रत्यक्ष कर और अप्रत्यक्ष सहायता का प्रावधान है जिसके अनुसार चौथो योजना पर काम होता है वह श्रम शोषण आर आर्थिक असमानता बढ़ाने के उद्दश्य से सर्वाधिक खतरनाक प्रयास है।

उपभोक्ता वस्तुऍ तीन प्रकार की होती है। 1. अनिवार्य आवश्यकता की 2. सुविधा की 3. विलासिता की। गरीब वर्ग के लिये सभी प्रकार के अनाज, दालें, खाद्य तेल, मसाले, कपड़े, इटा, खपड़ा, घास, भूसा आदि वस्तुऍ अनिवार्य आवश्यकता की श्रेणी में है और आवागमन, बिजली, डीजल, पेट्रोल, रसोई गैस, अखबार, टेलीफान आदि सुविधा की श्रेणी में है। गरीब वर्ग के लिये जो वस्तुऍ सुविधा की श्रेणी में आती हैं वे हो सकता है कि उच्च या उच्चमध्यम वग के लिये अनिवार्य आवश्यकता में शामिल हो किन्तु ये वस्तुऍ गरीबा के लिये तो निश्चित रूप से सुविधा में ही शामिल हैं। अनिवार्य आवश्यकता में नहीं। वर्तमान व्यवस्था गरीबो की अनिवार्य आवश्यकता की वस्तुओं पर कर लगाती है और सुविधा की वस्तुओं पर छूट देती है। वह कर भी इस तरह चोरी चोरी छुपकर तथा अप्रत्यक्ष रूप से लगाती है कि इन वस्तुओं के उत्पादक किसान और उपभोक्ता गरीब लोगों को बिल्कुल पता न चलें और बीच में बिचौलियों के माध्यम से अरबो खरबो रूपया वसूल लिया जाय। इसके ठीक विपरीत ये लोग पोस्टकार्ड, मिट्टी तेल, बिजली, अखबार, आदि वस्तुओ पर भारी सब्सीडी प्रदान करते हैं। इनके नाटक की बानगी देखने लायक है कि पोस्टकार्ड, मिट्टी तेल, टेलीफोन का दाम बढ़ा तो वामपंथियों सहित सभी नेताओं ने संसद से सड़क तक भारी विरोध किया। किन्तु जब अनाज तेलहन दवा जैसी वस्तुओं पर भारी कर लगा या बढ़ाया गया तो कोई विरोध नहीं हुआ। साइकिल जैसी वस्तु जो सिर्फ गरीबो के ही उपयोग की है उस पर भी सैकड़ों रूपये प्रति साइकिल उत्पादन कर लगता है पर कोई विरोध नहीं हुआ। जबकि सब जानते हैं कि गरीब लोग इक्का दुक्का पोस्टकार्ड का उपयोग करते हैं और बड़े लोग हजारों की संख्या में। इसी तरह मिट्टी तेल भी गरीब लोग कम तथा बड़े लोग गाडियों में अधिक उपयोग करते हैं। दूसरी ओर दवा या खाद्य तेल पर भारी कर लगाने और बढ़ाने से भी पूरे भारत में जरा भी हल्ला नहीं होता। पिछले वर्ष ही मध्यप्रदेश और छत्तीसगढ़ सरकारों ने कलम की एक नोक पर मंडी टैक्स पचास पैसा से बढ़ाकर दो प्रतिशत कर दिया और एक शब्द के संशोधन मात्र से सभी प्रकार के कृषि उत्पादन पर चार गुना कर लगने लगा। सोचिये आप कि क्या किसी को पता चला? क्या कोई हल्ला हुआ? नहीं। सिर्फ गरीबो के उपयोग की वस्तुओं पर ही ऐसा कर लगता हो यह बात नहीं है। उनके उत्पादन का भी ऐसा ही हाल है। अपने खेत में अपने खर्चे से पैदा की गई इमारती लकड़ी को भी बेचते समय करीब तीस प्रतिशत लकड़ी का मूल्य सरकार टैक्स के रूप में ले लेती है जबकि न जमीन उसकी है न कोई शासकीय सहायता। पर्यावरण प्रदूषण के लिये दिन रात चिन्ता करने वाली सरकार यदि निजी वृक्षारोपण को सभी करों से पूरी तरह कर मुक्त कर दे तब भी भारी मात्रा में वृक्षारोपण हो सकता है किन्तु शासन बांस और लकड़ी को कर मुक्त नहीं कर सकती। साल बीज, बीड़ी पत्ता तथा अन्य प्रकार की वनोपज पूरी तरह मजदूर अपने श्रम से इकट्ठा करता है किन्तु ऐसे इकट्ठा सामान में से भी आधा तक सरकार टैक्स के रूप में ले लेती है। महुआ पूरा का पूरा हाथ से चुनकर इकट्ठा होता है। अधिकांश महुआ क पेड़ व्यक्तिगत जमीन पर होते हैं। ऐसे एकत्रित महुआ पर भी विक्री कर और मंडी टैक्स मिलाकर छः प्रतिशत तक सरकार ले लेती है। म पूरी तरह आश्वस्त हूँ कि यदि सालबोज, बीड़ी पत्ता, महुआ, आंवला जैसी अनेक वस्तुओं में से सरकार टैक्स लेना बंद कर दे तो ग्रामीण श्रमिकों की आर्थिक स्थिति में सिर्फ एक वर्ष में ही बड़ा परिवर्तन आ सकता है। किन्तु शासन उसी में कभी बोनस तो कभी और कुछ नाटक करके श्रमजीवियों को धोखे में रखे रखता है।

आर्थिक असमानता में कमी तथा श्रम मूल्य वृद्धि के अलावा और कोई भी आर्थिक समस्याओं का समाधान नहीं है। वर्तमान व्यवस्था इन दोनों के समाधान के नाम पर जो भी प्रयास कर रही है वे प्रयास ही परोक्ष रूप से समस्याऍ बढ़ाते हैं। समस्याओं में वृद्धि का हल्ला करके वर्तमान व्यवस्था समाधान की गति तेज करती है और समस्या उसी तेज गति से बढ़ने लगती है। ऐसे दुष्चक्र में भारत का श्रमजीवी भी फसा हुआ है ओर गरीब भी। इन दोनों समस्याओं का समाधान बिल्कुल कठिन नहीं। **1.** कृत्रिम उर्जा की इतनी भारी मूल्य वृद्धि कर दी जावे कि उसका मूल्य वतमान से लगभग दो गुना हो जावे। साथ ही सभी प्रकार के बिक्रीकर प्रवेश कर, मंडी टैक्स, उत्पादन कर वनोपज रायलटी, या अन्य किसी भी प्रकार का कर जो किसी उत्पादक या उपभोक्ता के बीच लिया जाता है उसे पूरी तरह समाप्त कर दें। **2.** प्रत्येक परिवार की सम्पूर्ण सम्पत्ति पर अधिकतम दो प्रतिशत वार्षिक का सम्पत्ति कर लगाकर आय कर सहित सभी तरह के कर समाप्त कर दें। **3.** सुविधा की उपभोक्ता वस्तुओं पर सारी सब्सीडी समाप्त कर दी जावे और सब्सीडी प्रथा पर और गम्भीर विचार करके कोई नीति बनाई जावे।

इन तीन सुझाओं में से दूसरे और तीसरे का प्रभाव बहुत अधिक नही है। उसका प्रभाव आर्थिक असमानता कम करने तक ही सीमित है किन्तु पहला सुझाव अत्यधिक प्रभावोत्पादक, क्रान्तिकारी तथा विवादास्पद है। इस सुझाव के विरोध म सब लोग इस तरह टूट पड़ेंग जैसा उस समय तक पृथ्वी को चपटी समझने वाले लोग पृथ्वी को गोल कहने वाले के विरूद्ध टूट पड़े थे। किन्तु मैंने भारत के अनेक अच्छे विद्वानों के साथ बैठकर पचीस वर्षो तक इस विषय पर गंभीर अनुसधान करके यह निष्कर्ष निकाला है। अब सिर्फ भावनात्मक विरोध से काम नही चलेगा। मैं अपने कथन के पक्ष में आंकड़े सहित तर्क प्रस्तुत कर रहा हूँ। आप किन्हीं पश्चिमी विद्वानों की पुस्तकों के निष्कषा के आधार पर अपनी बात को प्रमाणित नहीं कर सकेंगे क्योंकि पश्चिम के देशों में श्रम अभाव है, श्रम मूल्य अधिक है, आर्थिक सम्पन्नता है आर दुनियाँ के गरीब देशो का शोषण करने की पर्याप्त क्षमता है दूसरी ओर भारत श्रम बहुल देश है, श्रम मूल्य कम है, गरीबी है तथा दुनियाँ के पश्चिमी देशो के शोषण से बचने की आवश्यकता है। भारत को पश्चिमी देशो के विद्वानों द्वारा निकाले गये निष्कर्षो का अन्धानुकरण करने की अपेक्षा स्वयं की परिस्थितियों के आधार पर निष्कर्ष निकालने होंगे। फलस्वरूप आपको भी मेरे इस सुझाव पर विचार करते समय भावना को दूर रखकर विचार तथा आंकड़ों का सहारा लेना होगा। पिछले पचीस वर्षो में आम तौर पर उठाये गये प्रश्न इस तरह रहे :–

1. कृत्रिम ऊर्जा पर भारी मूल्य वृद्धि होने से बेरोजगारी बढ़ेगी क्योंकि उद्योगों पर बुरा असर होगा।
2. इस तरह करने से ता आवागमन बहुत महंगा हो जायेगा। किसानों का उत्पादन बाजार तक नहीं पहुँच सकेगा।
3. देश में उत्पादन घट जायेगा। उत्पादन घटने से अर्थ व्यवस्था का क्षति होगी।
4. आम लोगों का विकास रूक जायेगा। आप वर्तमान भारत को बैलगाड़ी या लालटेन युग में ले जाने का क्यों प्रयास कर रहे हैं।
5. किसानों की उत्पादन लागत बढ़ जायेगी इससे किसानों को भारी क्षति होगी।
6. बाजार में बिकने वाली हर वस्तु का मूल्य बढ़ जायेगा। इससे गरीब उपभोक्ता बहुत प्रभावित होंगे।

पहले प्रश्न पर सर्वाधिक गंभीर विचार करना होगा। कृत्रिम उर्जा श्रम अभाव क्षेत्रों में श्रम सहायक तथा श्रम बहुल देशों में श्रम प्रतिस्पर्धी हुआ करती है। उत्पादन के दो विकल्प हैं :– **1.** श्रम ऊर्जा **2.** कृत्रिम ऊर्जा। उत्पादन के क्षेत्र में तीन विभाजन हैं:– **1.** वे कार्य जो सिर्फ श्रम से ही संभव है। **2.** वे कार्य जो सिर्फ कृत्रिम ऊर्जा चलित मशीनों से ही संभव है। **3.** वे कार्य जो दोनों के लिए खुले हैं। बेरोजगारी दूर करने का अर्थ श्रम ऊर्जा को अधिकाधिक रोजगार प्रदान करने से है, कृत्रिम ऊर्जा चलित मशीनो से बेरोजगारी दूर हो ही नहीं सकती। क्योंकि जो कार्य सिर्फ मशीन से ही संभव है उनकी वृद्धि या कमी से कोई फर्क नहीं होता। बेरोजगारी घटेगी बढ़ेगी तीसरे प्रकार के कार्यो में श्रम और मशीनों के अनुपात की घट बढ़ से। यदि कृत्रिम ऊर्जा सस्ती हुई तो श्रम संभव राजगार मशीनों की दिशा में आकर्षित होकर श्रम को बेरोजगार करेगा और यदि कृत्रिम ऊर्जा श्रम क अनुपात में महंगी हुई तो श्रम ऊर्जा कृत्रिम ऊर्जा से रोजगार अपनी ओर खींच कर कृत्रिम ऊर्जा को बेकार करेगा। श्रम के संबंध में अब तक दुनियाँ म दो ही विचार गंभीर माने गये है। :–**1.** मार्क्स का **2.** गांधी का। मार्क्स का मानना था कि मशीनी उत्पादन से प्राप्त लाभ श्रम जीवियों में वितरित कर देना इसका सबसे अच्छा समाधान हैं क्योंकि श्रम लाभ के उद्दश्य से ही होता है। यदि बिना श्रम क ही लाभ मिल जावे तो यह प्रणाली तो और भी अच्छी है। दूसरी ओर इसके ठीक विपरीत गांधी जी ने अनिवार्य मशीनीकरण को छोड़कर शेष क्षेत्र में मशीनी उत्पादन को निरूत्साहित करके उसे श्रम प्रधान उत्पादन की दिशा देने की नीति अपनाई। मार्क्स की नीति तो पूरी तरह अव्यावहारिक थी क्योंकि ऐसी योजना जिन लोगों के रोजगार पर प्रभाव डाल सकी उन्हें तो कोई लाभ नहीं मिला। इसके ठीक विपरीत बुद्धि प्रधान लोगों ने श्रमिकों का चोला पहनकर इस लाभ को आपस में बाट लिया। संगठित श्रमिको ने असंगठित श्रमिकों का निरंतर शोषण किया और आज भी कर रहे हैं। दूसरी ओर गांधी जी की नीति इस संबंध में अधिक व्यावहारिक थी किन्तु शासन की गलत ऊर्जा नीति के कारण उक्त योजना पूरी तरह फेल हो गई। तीव्र मशीनीकरण लगातार श्रम क्षेत्रों को निगलता चला गया क्योंकि मशीनीकरण को नियंत्रित करने का दायित्व शासन का था। शासन की नीयत ठीक नहीं थी। अतः शासन न मशीनी उद्योग और हस्त उद्योग दोनों को प्रोत्साहित किया। मशीनी उद्योग को अप्रत्यक्ष सस्ती बिजली देकर और हस्त उद्योग को प्रत्यक्ष सब्सीडी देकर। अर्थशास्त्र का एक बिल्कुल सामान्य सा सिद्धान्त है कि जिस वस्तु के मूल्य बढ़ेंगे उसकी मांग घटेगी। साथ ही जिस वस्तु की मांग बढ़ेगी उसके मूल्य बढ़ेंगे अर्थात् मांग और मूल्य एक दूसरे को निरंतर नियत्रित करते हैं। यदि आप श्रम की मांग बढ़ाते हैं तभी श्रम का मूल्य बढ़ेगा। और कोई तरीका नहीं। किन्तु यदि आप श्रम का मूल्य बढ़ाते हैं तो श्रम की मांग घटेगी। हमारी सरकारों ने स्वतंत्रता के बाद लगातार कत्रिम ऊर्जा को सब्सीडी देकर सस्ता रखा जिससे उसकी मांग बढ़ी। दूसरी ओर उन्होंने निरंतर न्यूनतम श्रम मूल्य बढ़ाने का पयास किया जिससे श्रम की मांग घटी। इस तरह धीरे धीरे श्रम का स्थान कृत्रिम ऊर्जा ग्रहण करती चली गई और श्रम बेरोजगार होता गया। भारत में बेरोजगारी बढ़ने का एक कारण यह भी है कि यहाँ निरंतर श्रम मूल्य में इस तरह वृद्धि की अव्यावहारिक घोषणाएँ की गई। अब हमारे क्षेत्र में दो प्रकार के श्रम मूल्य प्रचलित है :– **1.** वास्तविक श्रम मूल्य जो महिलाओं का एक सौ पचीस से एक सौ तीस तथा पुरूषों का एक सौ पैतीस से एक सा चालोस रूपये के करीब है **2.** कृत्रिम श्रम मूल्य जो एक सौ पचपन से एक सौ साठ रूपये के आसपास है। मार्क्स की श्रम नीति स्वतः ही असफल सिद्ध हो चुकी है। अब बैंक कर्मचारी कम्प्यूटरीकरण का विरोध कर रहे हैं। गांधी जी की श्रम नीति को शासन, पूँजीपतियों और बुद्धिजीवियों न छल करके असफल कर दिया है। अब सर्वोदय भी वर्धा घानी से हटकर पावर घानी की दिशा में बढ़ा है। अब गांधी जी की श्रम नीति में आंशिक परिवर्तन करके यदि कृत्रिम ऊर्जा की भारी मूल्य वृद्धि कर दी जावे तो तीसरे प्रकार के काम जो श्रम और मशीन दोनों से ही संभव है उनका बहुत बड़ा क्षत्र मशीनों से खिसक कर श्रम क्षेत्र में आ जायेगा। इससे श्रम की मांग भी बढेगी और मूल्य भी बढ़ेगा। पहले श्रम का मूल्य बढ़ाने की नीति ने मांग को निरूत्साहित किया है। अतः पहले मांग बढ़े तो मूल्य अपने आप बढ़ जायेगा।

कृत्रिम ऊर्जा श्रम का विकल्प है। श्रम कृत्रिम ऊर्जा का विकल्प नहीं। जब किसी मूल वस्तु का अभाव होता है तब विकल्प तैयार किया जाता है। विकल्प का उद्दश्य मूल का सहायक होना है, बेरोजगार करना नहीं। भारत में विकल्प को इतना सस्ता किया गया कि वह मूल से अधिक आवश्यक बन बैठा और मूल ही बेकार हो गया। गोबर की जविक खाद की कमी को पूरा करने के लिए अंग्रेजी खाद का अविष्कार हुआ। अंग्रेजी खाद पर इस तरह सब्सीडी देकर उससे सस्ता रखा गया कि जैविक खाद पूरी तरह बेकार हो गई। दुष्परिणाम हम देख रहे है। एक व्यक्ति की पत्नो ने गृह कार्यो में सहायता के उद्दश्य से एक दाई की नियक्ति करायी। अब वह दाई घर के सारे काम करने लगी। यहाँ तक कि मालिक के साथ क्लब भी जाना उसने ही शुरू कर दिया। पति महोदय दाई की तारीफ करने लगे ओर उस पर अधिक निर्भर रहने लगे तब पत्नी की आंख खुली और उसने दाई को हटाना चाहा जिसका पति ने विरोध शुरू किया। यही हाल अब कृत्रिम ऊर्जा का है। यह अब श्रम सहायक न होकर श्रम प्रतिस्पर्धी की भूमिका में हो गई है। अतः श्रम सहायता के लिए इसे विकल्प के स्वरूप की सीमा रेखा से आगे नहीं बढ़ना चाहिए। इस तरह मैं पूरी तरह आश्वस्त हूँ कि कृत्रिम ऊर्जा की मूल्य वृद्धि ही श्रम की मांग तथा श्रम मल्य बढ़ाने का एक मात्र समाधान है। बेरोजगारी बढ़ने का तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता है बल्कि बेरोजगारी समाप्त करने का यही एक अचक साधन है।

दूसरा प्रश्न है आवागमन के महंगे होने का। आवागमन हमारी मूल आवश्यकता न होकर एक सुविधा है। सम्पूर्ण भारत के 25 करोड़ परिवारों के यदि चार भाग करें तो पहला पचीस प्रतिशत निम्न वर्ग, दूसरा पचीस प्रतिशत निम्न मध्यम, तीसरा पचीस प्रतिशत उच्य मध्यम और चौथा पचीस प्रतिशत उच्च वर्ग मान सकते हैं। आवागमन यदि महंगा होता है और दस प्रतिशत आवागमन प्रभावित होता है तो दस प्रतिशत हवाई जहाज वाले ट्रेन का, दस प्रतिशत ट्रेन वाले बसों में, दस प्रतिशत बस वाले साइकिल या पैदल सवारी करेंगे। मैं नहीं समझता कि पचीस प्रतिशत निम्न वर्ग को इससे क्या क्षति होगी। यह वर्ग प्रायः तो यात्रा करता ही नहीं और करता है तो पैदल या साइकिल से। यह पूरी तरह श्रम जोवी है। न तो इस निम्न वर्ग का उत्पादन निर्यात होता है नही आयातित वस्तुओं का कोई उपयोग है। इसके ठीक विपरीत आवागमन महंगा होने से आयात निर्यात का खर्च बढ़ेगा और लघु उद्योगों को प्रोत्साहन मिलने से रोजगार के अवसर भी बढ़ेंगे और खेती के तरीके भी बदलेंगे बाहर की वस्तुऍ आकर ग्रामीण कृषि उत्पादन और ग्रामीण उद्योगों पर जो बुरा प्रभाव डालती है वे नहीं डाल पायेंगी। अतः आवागमन को महंगा करना ही उचित है।

स्वतंत्रता के बाद भारत की आबादी तीन गुनी ओर आवागमन तीस गुना बढ़ा है। यदि हम कृत्रिम ऊर्जा का मूल्य एक बार में दो गुना कर दें तो आवागमन व्यय में पचीस प्रतिशत तक की वृद्धि होगी और इस वृद्धि से दस पतिशत तक आवगमन कम हो सकता है। मैं नहीं समझता की भारत में दस प्रतिशत आवागमन कम होने से कौन सा विकास रूकेगा या कितनी अव्यवस्था हो जायेगी। मैं तो यह मानता हूँ कि आवागमन में अनियंत्रित वृद्धि को रोकना एक महत्वपूर्ण और उचित कदम होगा जो कुल मिलाकर लाभ प्रद होगा। अतः आवागमन महंगा होने से डरने को अपेक्षा उसका स्वागत करना चाहिये।

तीसरा प्रश्न है कि उत्पादन घटेगा। उत्पादन में कमी तीन बातों पर निर्भर करती है :– **1.** कच्चे माल की कमी **2.** ऊर्जा की अनुपलब्धता 3.मांग में कमी। कच्चे माल की न कमी है न यह विचार का विषय है। कृत्रिम ऊर्जा की भारी मूल्य वृद्धि से ऊर्जा की उपलब्धता निम्न आधार पर बढ़ जायेगी।

कल्पना कीजिये की कुल श्रम ऊर्जा एक हजार य़ूनिट और कुल कृत्रिम ऊर्जा भी एक हजार यूनिट है।

ऊर्जा के प्रकार	वर्तमान स्थिति में			ऊर्जा की मूल्य वृद्धि के बाद		
	उत्पादन में	व्यवस्था में	शेष बेकार	उत्पादन में	व्यवस्था में	बेकार
श्रम	150	300	550	500	400	100
कृत्रिम	600	400	–	750	250	–
योग	750	700	550	1250	650	100

उपरोक्त आंकड़े यह बताते हैं कि वर्तमान स्थिति में हमारी श्रम और कृत्रिम ऊर्जा मिलाकर दो हजार में से साढ़े सात सौ उत्पादन में सात सौ व्यवस्था में और साढ़े पॉच सौ बेरोजगार रहती है। जबकि कृत्रिम ऊर्जा की भारो मूल्य वृद्धि के बाद दो हजार यूनिट में से उत्पादन में साढ़े बारह सौ, साढ़े छः सौ व्यवस्था में और सिर्फ एक सौ यूनिट की बेकार रहेगी। कृत्रिम ऊर्जा महंगी होने से व्यवस्था से कृत्रिम ऊर्जा की भारी बचत होगी जो उत्पादन में जायेगी। इसी तरह कृत्रिम ऊर्जा के महंगा होने से अनेक मशीनी कार्य जो श्रम ऊर्जा से संभव है वे श्रम ऊर्जा से संचालित होंगे। आवागमन महंगा होने से कुटीर और हस्त उद्योगों को भी प्रोत्साहन मिलेगा। इस तरह उत्पादन में भारी वृद्धि हेतु हमारे पास ऊर्जा उपलब्ध रहेंगी।

उत्पादन में तीसरा कारण है मांग। यदि किसी वस्तु की मूल्य वृद्धि होती है तो मांग घटती है। श्रम मूल्य वृद्धि और कृत्रिम ऊर्जा की मूल्य वृद्धि से उत्पादन का लागत मूल्य बढ़ जायेगा यह सही ह किन्तु उक्त वस्तु का विक्रय मूल्य घट जायेगा क्योंकि उत्पादन और विक्रय के बीच भारी कर लगते हैं वे समाप्त हा जाने से बहुत अन्तर हो सकता है। हम दो उदाहरण सरसों तेल तथा गेहूँ का देख सकते हैं :–

गेहूँ का आटा (2003 के आधार पर)

<u>वर्तमान स्थिति म</u>			<u>ऊर्जा मूल्य वृद्धि के बाद</u>
गेहूँ उत्पादन व्यय	350	प्रति क्विंटल	350 प्रति क्विंटल
पानी ऊर्जा	10	–	20
थ्रशर बिजली	3	–	6
पिसाई	40	–	45
अन्य खर्च	300	–	300
आटा	698	–	721
बिक्री कर	14		——
मंडी टैक्स	14		——
आटा योग	726		721प्रति क्विंटल

हम देखेंगे कि हमारे क्षेत्र में कुल मिलाकर विक्रय मूल्य म सरसो तेल में छः रूप्ये प्रति लीटर तथा गेहूँ पांच रूपये प्रति क्विंटल की कमी होगी जो या तो उत्पादक को मिलेगी या उपभोक्ता को या दोनों को मिलाकर। इस हिसाब से व्यापारियों की शासकीय कार्यालयों के हिसाब, किताब, अफसरशाही आदि का खर्च तो जोड़ा ही नहीं गया है। इस तरह किसी भी आवश्यक उपभोक्ता वस्तु के मूल्य में वृद्धि का तो कोई प्रश्न ही नहीं है बल्कि सभी वस्तुओं के मूल्यों में कमी अवश्य होगी।

इस तरह हम देखेंगे कि कृत्रिम ऊर्जा की भारी मूल्य वृद्धि के बाद ऊर्जा की उपलब्धता भी बढ़ेगी और उत्पादनों का विक्रय मूल्य भी कम होगा और कुल मिलाकर उत्पादन तेज गति से बढ़ना निश्चित है।

चौथी आशंका है कि भारत का विकास रूक जायेगा और भारत बैलगाड़ी और लालटेन युग में जा सकता है। मैं समझता हूँ कि यह प्रश्न भावनात्मक अधिक है वैचारिक कम। प्रश्न उठता है कि क्या हम गरीबों को समाप्त करके बैलगाड़ी और लालटेन युग से मुक्ति पाना ठोक समझते हैं? ऐसा न तो होना चाहिये और न ही होने दिया जायेगा। आप तो बैलगाड़ी और लालटेन के अस्तित्व की बात कर रहे हैं अभी भारत में दस पंदह प्रतिशत ऐसे भी लोग हैं जो अन्धेरे म सोते हैं और पैदल चलते हैं। यदि ऐसे लोग श्रम मूल्य वृद्धि तथा आर्थिक असमानता घटने के परिणाम स्वरूप लालटेन और बैलगाड़ी युग में बढ़ जावे तो हमें प्रसन्नता होनी चाहिये। इस कार्य के लिये यदि हवाई जहाज या मोटर कार वालों को थोड़ी सुविधा मे कमी हो तो सहर्ष स्वीकार करें। हम कोई बड़े लोगों को परेशान नहीं कर रहें। हम तो सिर्फ रोटी, कपड़ा, मकान, दवा, घास, भूसा, वनोपज, खाद्य तेल आदि हजारो आवश्यक उपयोग की वस्तुओं पर से कर हटाकर बिजली, डीजल, मिट्टो तेल, कोयला और पेट्रोल पर लगा रहे हैं। इतने साधारण परिवर्तन से ऐसे गंभीर शंका में जाना उचित नहीं।

पाचवां पश्न है कि किसानों की उत्पादन लागत बढ़ जायेगी। यह बात पूरी तरह भ्रामक है। जिस तरह बुद्धिजीवियों ने श्रम का शोषण करने के उद्दश्य से शिक्षित बेरोजगारी शब्द तैयार किया है उसी तरह बड़े किसानों ने छोटे किसानों का शोषण करने के उद्दश्य से किसान शब्द का दुरूपयोग शुरू किया है। श्रम निर्भर किसानों की कृषि अलाभकर है यह भी बात बिल्कुल सच है तथा मशीनी खेती लाभप्रद है यह भी बिल्कुल सच है। आजकल परंपरागत कृषि के स्थान पर मशीनी खेती को उन्नत खेती कहा जाने लगा जो धीरे धीरे किसानों का पर्याय बन गयी। कुल किसानों की संख्या एक हजार मानकर हम आकलन करें।

	वर्तमान स्थिति में	**ऊर्जा मूल्य वृद्धि के बाद**
श्रम निर्भर	600	700
आंशिक कृत्रिम ऊर्जा निर्भर	300	250
पूर्णतः कृत्रिम ऊर्जा निर्भर	100	50
योग	1000	1000

पहली बात तो यह है कि कृत्रिम ऊर्जा की मूल्य वृद्धि के बाद भी किसी भी उत्पादन के विक्रय मूल्य में कुछ न कुछ वृद्धि ही होगी क्योंकि उस पर लगने वाला कर समाप्त होगा। यह बात विशेष रूप से सोचने लायक है कि कृत्रिम ऊर्जा मूल्य कमी का कोइ लाभ श्रम निर्भर साठ प्रतिशत किसानों को नहीं हो रहा है किन्तु उत्पादन पर टैक्स का नुकसान उन श्रम पधान किसानों को भी उठाना पड़ता है। यदि कृत्रिम ऊर्जा की भारी मूल्य वृद्धि की गई तो श्रम निर्भर किसानों को तो लाभ होगा क्योकि टैक्स हटने से उनकी उपज का अधिक मूल्य उन्हें प्राप्त होगा और आंशिक कृत्रिम ऊर्जा निर्भर किसानों को न लाभ न हानि है। बहुत बड़े ओद्योगिक स्तर पर खेती करने वालों को कुछ हानि हो सकती है जो जोताई से लेकर कटाई तक मशीन से करते हैं। पूरे भारत में जिस तरह छोटे उद्याग धीरे धीरे बड़े उद्योगों के शोषण के शिकार होकर दम तोड़ रहे हैं उसी तरह धीरे धीरे छोटे और श्रम निर्भर किसान भी बड़े किसानों के समक्ष दम तोड़ रहे हैं। बड़े किसानों के दबाव में अंग्रेजी खाद पर सब्सीडी दी जाती है और पशुचारा तथा खलियों पर कर लगता है। हम समाज सुधारक लोग चाहते हैं कि लोगों को भावनात्मक प्रचार से तो परंपरागत खेती की ओर प्रोत्साहित कर और आर्थिक दृष्टि से उसके विकल्प को सब्सीडी देते रहें यह बिल्कुल असंभव और नासमझी की बात है।

हम लोगों ने आंकड़े तैयार करके स्थानीय गेहूँ बिक्री का लाभ जोड़ लिया। किन्तु यदि गेहू का परिवहन होगा तब क्या होगा। इस संबंध में मैं आपको स्पष्ट कर दूं कि यदि गेहूँ का दूर तक भी परिवहन होता है तो उस पर उसी प्रकार नये प्रदेश का मंडी टैक्स और बिक्रीकर पुनः जुड़ जाता है अतः परिवहन क बाद भी कोई अन्तर नहीं होगा।

आम तौर पर लोग प्रश्न करते है कि बाजार मे बिकन वाली हर वस्तु का मूल्य बढ जायगा। मै पूरी तरह स्पष्ट ह कि बाजार मे बिकने वाली अधिकांश उन वस्तुओ का मूल्य घट जायेगा जो आम उपयोग की है। अतः यह आशंका पूरी तरह निराधर है।

कृतिम उर्जा पर भारी कर लगाकर उपभोक्ता वस्तुआ पर लगने वाले सभी कर समाप्त करने से आर्थिक असमानता घटना निश्चित है। आर्थिक असमानता को कम करने का सिर्फ एक ही सिद्धान्त है आर्थिक दृष्टि से कमजोर लोगो की आय बढे व्यय घटे और सम्पन्न लोगो की आय घटे व्यय बढे। ये चारो काम सिर्फ एक ही उपाय से सिद्ध हो सकते ह कि कृत्रिम उर्जा पर भारी कर लगाकर सभी कर हटा दे। अनुमानित आकडे इस प्रकार है :–

अनुमानित मासिक आय			**ब्यय**		**बचत**	
	वर्तमान	परिवर्तित	वर्तमान	परिवर्तित	बचत वर्तमान	बचत परिवर्तित
श्रमजीवी	4500	8000	4000	6000	500	2000
बुद्धिजीवी	15000	12000	15000	12000	3000	3000
सम्पन्न	30000	25000	18000	22000	12000	3000

इस अनुमानित तालिका से भी स्पष्ट है कि कृत्रिम ऊर्जा पर भारी कर लगने और सभी कर समाप्त करने से श्रम प्रधान गरीब का खर्च घटेगा और कृत्रिम ऊर्जा का उपयोग करने वाले का खर्च बढ़ेगा। कुल मिलाकर जब गरीब व्यक्ति की आय बढ़ेगी और व्यय घटेगा तथा सम्पन्न व्यक्ति की क्रमशः आय घटेगी और खर्च बढ़ेगा तो आर्थिक असमानता तो दूर होना निश्चित ही है। इस संबंध में एक अनुमानित आंकड़ा और सहायक हो सकता है। कुल आबादी को चार भाग करें 25 प्रतिशत निम्न 25 प्रतिशत निम्न मध्यम 25 प्रतिशत उच्च मध्यम और 25 प्रतिशत उच्च।

<u>कृत्रिम ऊर्जा का उपयोग</u>

25 प्रतिशत निम्न	नगण्य
25 प्रतिशत निम्न मध्यम	10 प्रतिशत
25 प्रतिशत उच्च मध्यम	20 प्रतिशत
25 प्रतिशत उच्च	70 प्रतिशत

इस तालिका से भी स्पष्ट है कि कृत्रिम ऊर्जा की मूल्य वृद्धि का प्रभाव उच्च वर्ग पर अधिक पड़ेगा और निम्न वर्ग पर लगभग शून्य। जबकि श्रम मूल्य वृद्धि का सारा का सारा लाभ निम्न वर्ग को ही मिलना निश्चित है।

इस प्रणाली से दूसरा लाभ यह है कि इससे रोजगार के अवसर बढ़ेंगे। कृत्रिम ऊर्जा की भारी मूल्य वृद्धि से आवागमन महगा होगा। इससे ग्रामीण उद्योग, लद्यु उद्योग, हस्त उद्योग प्रोत्साहित होंगे, श्रम की मांग बढ़ेगी अनेक ऐसे कार्य जो मशीन और श्रम दोनों से हो सकते हैं वे मशीनों से हटकर श्रम क्षेत्र की ओर आकर्षित होंगे तथा कुल मिलाकर यह होगा की बेरोजगारी तीव्र गति से घटेगी। यहॉ एक बात पर गंभीर विचार करना होगा कि वर्तमान में अमेरिका आदि अनेक विकासशील देशों ने तीव्र औद्योगोकरण के ही माध्यम से अपने रोजगार के अवसर बढ़ाये ह फिर भारत ऐसा विपरीत मार्ग क्यों अपनावे।

औद्योगीकरण से रोजगार पर दो प्रभाव पड़ते हैं पहला रोजगार पर आकर्षण दूसरा रोजगार का विकर्षण। कोई भी बड़ा उद्योग जितने क्षेत्र में रोजगार विकर्षण करता है या देता है उसे रोजगार सहायक क्षेत्र मानते हैं और जितने क्षेत्र से रोजगार आकर्षण करता है या कम करता है उसे शोषण क्षेत्र मानते है। किसी भी उद्योग की उसकी क्षमता के आधार पर विकर्षण क्षेत्र की अपेक्षा आकर्षण क्षेत्र या रोजगार सहायक की अपेक्षा रोजगार शोषण का क्षेत्रफल भी बहुत बडा होता है और मात्रा भी। पश्चिमी देशों ने बड़े बड़े उद्योग लगाकर अपने देशों में रोजगार के अवसर पैदा किये क्योंकि दुनियॉ मे अन्य अनेक ऐस देश थे जिनका बहुत रोजगार शोषण हुआ। किन्त भारत यदि उस दिशा में चला भी तो उसके पास आकर्षण क्षेत्र के रूप में दुनियॉ के कौन कौन से देश बचे है। स्वाभाविक ही है कि वह अपने ही देश में कुछ क्षेत्र का शोषण करेगा और थोड से क्षत्र को रोजगार समृद्ध करेगा। अभी हरियाणा आदि राज्यों का विकास इसी आधार पर हुआ है कि हमारे छत्तीसगढ़ के लोग हरियाणा, दिल्ली और पंजाब का माल बड़ी मात्रा में मंगाकर उपयोग करते हैं। इसे रोकने का एक तरीका यह है कि हम छत्तीसगढ़ वासी भी हरियाणा क ही समान औद्योगिक उत्पादन बढ़ा लें किन्तु एक दूसरा मार्ग यह भी है कि हम हरियाणा से छत्तीसगढ़ तक के आवागमन खर्च तथा हरियाणा की उत्पादन लागत को बढ़ाकर उसे शोषण से रोकने में समर्थ हो जावे। मैं सोचता हूँ कि वर्तमान समय में सिर्फ पहली नीति पर ही काम हो रहा है जो कुल मिलाकर रोजगार के लिये घातक है। क्योंकि हमारी नीतियॉ हरियाणा की मशीनों का काम तो घटायेगी ही साथ ही अपने आस पास के श्रम का भी शोषण करेगी। अतः हमें दोनो ही आधारों पर काम करना चाहिये। हमें अपने औद्योगिक विस्तार को रोकने की काई आवश्यकता नहीं है किन्तु हम ऐसी नीति तो अवश्य ही अपना सकते हैं कि हमारा औद्योगिक विस्तार उन्हीं क्षेत्रों में हो जो काम श्रम संभव न हो। कृत्रिम ऊर्जा की भारी मूल्य वृद्धि से यह काम बहुत अच्छे ढंग से हो सकेगा। अब हमारे क्षेत्र में भी गेहूँ कटाई मिसाई की या बिजली से ईटा बनाने वाली मशीनों का प्रचलन बढ़ रहा है। ये मशीने तेजी से श्रम बेकार करेंगी। इन पर रोक लगाने के लिए कोई कानून आवश्यक नहीं। यदि आपने कृत्रिम ऊर्जा का मूल्य बढ़ा दिया तो ये मशीने स्वयं ही पिछड़ जावेंगी। आज सम्पूर्ण भारत का सम्पूर्ण उद्योग अपेक्षा कृत सम्पन्नों या बड़े उद्योगों की तरफ सिमटता सिमटता विदेशी कंपनियों तक जा रहा है। अनेक छोटे उद्योग भारतीय बड़े उद्योगों के पास सिमट रहें हैं और ऐसे भारतीय बड़े उद्योग धीरे धोरे बहुराष्ट्रीय कंपनियों के पास। नई ऊर्जा नीति इस मजबूरी को समाप्त कर देंगी और सम्भव है कि कुछ बड़े उद्योग श्रम क साथ प्रतिस्पर्धा में पिछड़कर बंद हो जावे या अन्य उद्योगों की ओ चल जावे। यह भी संभव है कि श्रम शोषण की ओर से हताश ये कंपनियॉं अपना रूख बदलकर कुछ ऐसा उत्पादन करने लगे जो हमें विदेशी निभरता कम होने में सहायक हो सके। कुल मिलाकर जो भी होगा वह अच्छा ही होगा। कुटीर उद्योग बढगे, बड़े उद्योगों को नये नये उद्योगों के अवसर मिलेंगे तब बेरोजगारी समाप्त हो सकती है।

इस नीति से एक तीसरा लाभ भी होगा। अब तक भारत का करीब 70 प्रतिशत डीजल, पेट्रोल, मिटटीतेल, गैस आदि आयात होता है। इस आयात पर हमारी कीमती विदेशी मुद्रा खर्च होती है इन सबकी भारी मूल्य वृद्धि होने से इनकी खपत भी घटेगी और आयात भी घटेगा। इससे हमें विदेशी मुद्रा की बहुत बचत होगी। इससे हमारी विदेश नीति पर भी अच्छा प्रभाव पड़ेगा।

भारत में पर्यावरण प्रदूषण का सबसे बड़ा कारण आवागमन से निकलने वाला धुऑ है। यह कितना बड़ा षड़यंत्र है कि ट्रेक्टर से निकले हुये धुएँ को प्रभाव हीन करने के उद्दश्य से किये गये वृक्षारोपण हेतु श्रम उत्पादित बीड़ी पत्ता या साल बीज पर भारी कर लगाया जाय। इसी तरह मोटर साइकिल के धुऑ को प्रभावहीन करने के लिए साइकिल के उत्पादन पर कर लगाया जावे। बैलों की खली और श्रमिको की साइकिल पर भारी कर लगाकर ट्रैक्टर और मोटरसाइकिल को राहत देना घातक नोति है और तुरन्त त्यागना चाहिये। मेरे विचार में कृत्रिम ऊर्जा की भारी मूल्य वृद्धि आवागमन को निरूत्साहित करेगी जिससे पर्यावरण प्रदूषण की रोकथाम भी हो सकेगी और प्रदूषण निवारक उपाय हेतु धन भी उपलब्ध हो सकेगा। भारत ग्रामीण आबादी के शहरों की ओर पलायन से भी बहुत परेशान है। हमेशा ही शहरों की आबादी बढती जा रही है। हम शहरों में जितनी भी सुविधाएँ बढ़ाते हैं वे आबादी बढ़ते ही फिर कम पड़ जाती है। शहरी आबादी पर नियंत्रण का अब तक कोई कारगर उपाय नहीं हो सका है कृत्रिम ऊर्जा की भारी मूल्य वृद्धि स शहरी जनजीवन महंगा हो जायेगा। लघु उद्योगों के पनपने से गांवों में रोजगार के अवसर बहुत बढ़ेंगे। इससे शहरों की ओर से गांवों की ओर पलायन होना शुरू हो जायेगा।

अब तक अधिकांश विद्युत उत्पादन केन्द्र भारी घाटे म चल रहे ह। नये उत्पादन केन्द्र खोलने से यह घाटा और बढ़ सकता है। परिणाम स्वरूप उत्पादन बढ़ाना एक भारी बोझ बना हुआ है। बिजली का मूल्य बढ़ाने से विद्युत उत्पादन इकाईयां लाभ कमाने लगेंगी। इससे विद्युत उत्पादन की ओर आकर्षण बढ़ेगा। विद्युत उत्पादन बढ़ने से हम हर तरह का लाभ ही लाभ होगा।

हम बिजली के वर्तमान श्रोतों से हटकर गोबर गैस, सौर ऊर्जा या पवन चक्की को भी बढाने का प्रयास कर रहे हैं जो सस्ती बिजली के समक्ष प्रतिस्पर्धा में टिक ही नहीं रही। यदि बिजली का दाम बढ़ा दे तो ये सब ऊर्जा श्रोत स्वय ही विकास की ओर बढ़ने लगेंगे।

सस्ती कृत्रिम ऊर्जा के कारण हम ऐसी तकनीक विकसित करने पर अधिक ध्यान नहीं दे रहें जो कम ऊर्जा की खपत करें। यदि ऊर्जा महंगी होगी तो स्वाभाविक रूप से कम ऊर्जा खपत से अधिक उत्पादन की तकनीक का विकास होगा और ऐसी तकनीक हमें कृत्रिम ऊर्जा पर निर्भरता भी कम करेंगी और उसके दुष्प्रभाव भी।

भारत में वर्तमान कर प्रणाली अत्यंत ही भ्रष्टाचार प्रधान है। आप विचार करिये कि फल, सब्जी, अनाज, दवा, तेल, ईटा, खपड़ा, पशुचारा जैसी हजारो ऐसी वस्तुओं पर कर लेना जिसकी खपत तथा उत्पादन का पूरा सघन जाल पूरे भारत में फैला हो, कितना भ्रष्टाचार युक्त है। इसके बदले में डीजल, पेट्रोल ,बिजली, कायला, मिट्टी तेल और गैस जैसो शासन आधारित गिनी चुनी वस्तुओं पर कर लेना भ्रष्टाचार को बहुत ही कम कर देगा। विद्युत विभाग घाटे में होने स हम विद्युत चोरी रोक नहीं पाते। जब बिजली लाभदायक उद्योग में बदल जायेगी जो उसकी चारी रोकना भी आसान हो जायेगा।

वर्तमान अर्थव्यवस्था पूरी तरह शासन पर निर्भर है। खादी, लघु उद्योग, हस्तकला, वृक्षारोपण, खाद्यान्न आदि पर भी सब्सीडी और बड़े बड़े उद्योग, समाचार पत्र कृत्रिम ऊर्जा पर भी सब्सीडी। मशीनो उद्योग को बिल्कुल कम कीमत पर बिजली, मशीनी सिंचाई वाले किसानों को सस्ती बिजली, सस्ती खाद तथा उद्योगों को कम ब्याज पर ऋण सुविधा। बदले में अनाज, कपड़ा, दवा, तेल, साइकिल आदि पर कर। क्या गोरख धधा है? पूरी अर्थव्यवस्था को शासन केन्द्रित करके रखा गया है। कृत्रिम ऊर्जा पर भारी कर लगने तथा अन्य कर समाप्त होने से कर और सब्सीडी दोनो का गोरख धंधा बंद हा जायगा। इससे शासन का सामान्य जन जीवन में हस्तक्षेप भी बहुत कम हो जायेगा ओर इससे ग्रामीण अर्थ व्यवस्था तथा ग्रामीण आत्मनिर्भरता बहुत मजबूत होगी। यह प्रयोग ग्राम स्वराज्य में भी बहुत सहायक होगा। आवागमन महंगा होगा, आथिक असमानता घटेगी, श्रम की मांग बढ़गी पर्यावरण प्रदूषण घटेगा, शहरी आबादी गांवों की ओर आकर्षित होगी, परंपरागत कृषि को प्रोत्साहन मिलेगा, बड़ी बड़ी स्वदेशी या विदेशी

कंपनियों का दबाव कम होगा, भ्रष्टाचार के अवसर घटेंगे। जब इतना कुछ संभव है तो ग्राम स्वराज्य को अर्थव्यवस्था में और क्या चाहिये? यही तो ग्राम स्वराज्य है जिससे ग्राम समाज स्वावलम्बी और आत्मनिर्भर होगा।

जो मित्र ऐसा सोचते है कि खादी, वृक्षारोपण, परंपरागत खेती, गोपालन आदि का प्रचार और विस्तार भावनात्मक रूप से हो सकता है वे मित्र भ्रम में है। ऐसे कार्यो पर भावनात्मक प्रचार का असर कम लोगों पर तथा क्षणिक होता है। आर्थिक समस्याएँ तो आर्थिक परिवर्तन से ही निपट सकती है। खादी भले ही महंगी हो किन्तु हम यह सोचकर खादी पहने इससे रोजगार मिलेगा, भावनात्मक शुद्धि होगी, पर्यावरण पर असर होगा आदि भावनात्मक बातें एक दो प्रतिशत से अधिक लोगों पर असर नहीं डालती। किन्तु यदि खादी, गोबर, ताजा दूध, वृक्षारोपण आदि की अपेक्षा मशीनी कपड़े, डब्बा बंद दूध अंग्रेजी खाद आदि वस्तुएँ आर्थिक दृष्टि से अलाभकर तथा महंगी होगी तो बिना प्रचार के स्वाभाविक रूप से यह परिवर्तन आ जायेगा।

अन्त में हम इस निष्कर्ष पर पहुॅच रहे ह कि भारत में दो आर्थिक समस्याओं :—**1.** श्रम मूल्य ह्रास **2.** आर्थिक असमानता का एक और केवल एक ही समाधान है कि कृत्रिम ऊर्जा की भारी मूल्य वृद्धि करके आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं तथा श्रम उत्पादन को पूरी तरह कर मुक्त कर देना चाहिये। साथ ही मंहगाई शिक्षित बेरोजगारी, गरीबी , मुद्रा स्फीति आदि अस्तित्वहीन भ्रम मूलक समस्याओ का भी अपने आप समापन हो जाएगा। सबसे अच्छा तो यह होगा कि इन समस्याओ के नाम पर पनपने वाली राजनीति की दुकानदारी भी समाप्त हो जाएगी। मै जानता हूँ कि कोई भो राजनैतिक दल इस प्रस्ताव का समर्थन करके अपने पैरो पर कुल्हाडी नही मारेगा। किन्तु अन्य कोई समाधान भी नही है। इसलिये समाज को हो इसमे आगे आना होगा। आपकी समीक्षा आमंत्रित है । यदि कही कोई बात न समझ मे आवे तो आप अवश्य पूछने की कृपा करे।